धर्मायण

अंक : 87
जुलाई-सितम्बर, 2015
श्रावण-आश्विन, २०७२

(धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका)

कृष्णाजन्म (१७०३ ई.)

A Collection of Voyages and Travels नामक पुस्तक में Philip Baldaeus के आलेख The idolatry of the East India Pagons."में प्रकाशित

महावीर मन्दिर प्रकाशन

मूल्य – पन्द्रह रुपये

रुचिकृत पितृ-स्तुति

हिन्दी अनुवाद- भवनाथ झा

यदि हम सभी ईश्वर की संतान हैं तो हमारे पूर्वज, ईश्वर और हमारे बीच की योजक कड़ी हैं। अनादि काल से यह प्रजातन्तु फैलता रहा है तब जाकर हमारा जन्म हुआ है, हमारे बच्चे है, हमारा परिवार है। हम उस योजक-तन्तु को भूल नहीं सकते। सनातन धर्म की मान्यता रही है कि हमारे मृत पूर्वज भी हमें आशीर्वाद देते है, वे भी देवता के समान हमारे वन्दनीय हैं।

प्राचीन काल में रौच्य नामक 13वें मन्वन्तर के प्रजापति रुचि ने पितर की स्तुति कर समृद्धि पायी थी तथा अगले जन्म में मन्वन्तर के स्वामी बने।ये इतने विख्यात हुए कि श्राद्धकर्म में इनका नाम लिया जाता है। वे विरक्त होकर संसार में विचरण करते थे।उन्होंने अपना घर नहीं बसाया। उन्हें किसी भी ऐश्वर्य भोगों आदि साधनों में स्पृहा-लिप्सा नहीं रही। उनके इस आचरण से उनके पितर बड़े सोच में पड़ गए और उन्होंने रुचि को कर्तव्य बोध कराने का निर्णय लिया ताकि संसार का कल्याण हो सके। पितरों ने रुचि से कहा, 'बेटा! गृहस्थ पुरुष समस्त देवताओं, पितरों, ऋषियों और अतिथियों की पूजा करके पुण्यमय लोकों को प्राप्त करता है। वह 'स्वाहा' के उच्चारण से देवताओं को, 'स्वधा' शब्द से पितरों को तथा अन्नदान आदि से समस्त प्राणियों व अतिथियों को उनका मान समर्पित करता है। अत: तुम गृहस्थ आश्रम स्वीकार करो तथा विवाह करके संतान उत्पन्न करो। इसी में तुम्हारा कल्याण होगा अन्यथा तुम्हें जन्म-जन्मान्तर कष्ट उठाना पड़ेगा। बेटा! जो कर्म आसक्ति रहित होकर किया जाता है, वह बंधन का हेतु नहीं बनता। कर्म का पालन करते हुए जो मनुष्य संयम करते हैं, उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है। अत: हमारा कहना मानकर विधिपूर्वक स्त्री-परिग्रह करो। इसी में सब प्रकार से भलाई है।' इतना कहकर वे अदृश्य हो गए।

पितरों के इस आदेश से रुचि बहुत उद्विग्न हो गए। बहुत सोच-विचार के बाद अंत में उन्होंने पितरों की बात को ठीक समझा। किन्तु तपस्या से उनका शरीर जर्जर हो गया था। उनकी चिंता थी कि ऐसे में कौन उन्हें अपनी कन्या देगा? तभी पितरों ने लीला से उसकी बुद्धि में प्रेरणा की कि तुम ब्रह्माजी की उपासना करो, वे पितामह हैं, समस्त लोकों के पितर हैं, उनकी कृपा से तुम्हारा मार्ग प्रशस्त होगा। इस अज्ञात प्रेरणा स्वरूप उन्होंने ब्रह्माजी की आराधना आरंभ कर दी। ब्रह्माजी महात्मा रुचि के तप से संतुष्ट हो गए तथा प्रसन्न होकर उन्हें यथेष्ट वर प्रदान किया और कहा कि तुम श्रेष्ठ पत्नी की प्राप्ति हेतु अपने पितरों की स्तुति करो। ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसे वे संतुष्ट होकर न दे सकें। रुचि ने ब्रह्माजी के कथनानुसार एक नदी के एकान्त तट पर पहले पितरों का तर्पण किया और फिर पूर्ण श्रद्धा व विश्वास से उनकी स्तुति की। उस समय रुचि ने जो स्तुति की उसे '**पितृ-स्तोत्र**' का नाम दिया गया। तभी उसके समक्ष एक बहुत ऊँचा तेज:पुंज प्रकट हुआ, जो पूरे आकाश में व्याप्त हो गया। तत्पश्चात् उस तेज से पितर प्रकट हुए। रुचि ने फल, फूल तथा अन्य जो भी सामग्री उन्हें अर्पित की उन्होंने वह सहर्ष स्वीकार करके ग्रहण की। फिर पितरों ने उसे कोई भी वर माँगने को कहा तो उसने अभिलषित पत्नी-प्राप्ति का वर माँगा। पितरों ने कहा, 'तुम्हें शीघ्र ही एक दिव्य मनोहर पत्नी प्राप्त होगी और उससे उत्पन्न तुम्हारा पुत्र 'मनु' होकर संपूर्ण पृथ्वी का स्वामी बनेगा। तुम्हारा सब प्रकार अभ्युदय हो।' ऐसा कहकर वे अंतर्ध्यान हो गए।

महात्मा रुचि पितरों की इस लीलामयी कृपा पर मुग्ध हो ही रहे थे कि उसी समय नदी के भीतर से, सभी सुलक्षणों से सम्पन्न एक मनोहर कन्या को लेकर प्रम्लोचा नामक अप्सरा प्रकट हुई और रुचि से प्रार्थना करने लगी, 'महात्मन् यह मेरी अत्यन्त प्रिय तथा सभी प्रकार से मनोहर कन्या है। यह वरुण के पुत्र महात्मा पुष्कर से उत्पन्न हुई है। मैं इस सुन्दर कन्या को तुम्हें, पत्नी बनाने के लिए समर्पित करती हूं। इसे ग्रहण करो। इससे तुम्हें एक महान् पुत्र की प्राप्ति होगी जो 'मनु' नाम से प्रसिद्ध होगा।' रुचि विस्मित होकर सोचने लगे कि पितरों ने भी ऐसा ही कहा था। अतः उनका वर अमोघ था। फिर रुचि ने 'तथास्तु' कहकर प्रम्लोचा की बात स्वीकार कर ली। तदन्तर प्रम्लोचा ने अपनी कन्या को महर्षियों के सान्निध्य में वहीं नदी तट पर रुचि को सविधि प्रदान किया। समय से महात्मा एक गृहस्थी बना पितरों की कृपा से, ताकि संतान-परम्परा का क्रम निरन्तर बना रहे। कुछ समय पश्चात् रुचि के घर एक पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ। रुचि का पुत्र होने से वह 'रौच्य-मनु' के नाम से विख्यात हुआ। इनकी कथा मार्कण्डेय पुराण में वर्णित है। उनके द्वारा की गयी पितृ-स्तुति यहाँ हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित है।

॥ रुचिरुवाच॥

नमस्येऽहं पितृञ्छ्राद्धे ये वसन्त्यधिदेवताः।
देवैरपि हि तर्प्यन्ते ये च श्राद्धे स्वधोत्तरैः॥१॥

पितृ श्राद्ध में जो देवता वास करते हैं, जो स्वधा के बाद देवों से तृप्त किये जाते हैं, उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ।।1।।

नमस्येऽहं पितृन्स्वर्गे ये तर्प्यन्ते महर्षिभिः।
श्राद्धैर्मनोमयैर्भक्त्या भुक्तिमुक्तिमभीप्सुभिः॥२॥

भुक्ति-मुक्ति चाहनेवाले मनोमय श्राद्ध के द्वारा भक्तिपूर्वक महर्षियों से जो स्वर्ग में तृप्त किये जाते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।2।।

नमस्येऽहं पितृन्स्वर्गे सिद्धाः सन्तर्पयन्ति यान्।
श्राद्धेषु दिव्यैः सकलैरुपहारैरनुत्तमैः॥३॥

श्राद्धों में सबसे सुन्दर दिव्य सभी उपहारों से सिद्ध लोग जिनको स्वर्ग में तृप्त करते हैं, उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ।।3।।

नमस्येऽहं पितृन्भक्त्या येऽर्च्यन्ते गुह्यकैरपि।
तन्मयत्वेन वाञ्छद्भिर्ऋद्धिमात्यन्तिकीं पराम्॥४॥

भक्ति पूर्वक तन्मय हो परा आदित्य को चाहने वाले गुह्यकों द्वारा जो पितर पूजित होते हैं, उन्हें मैं प्रणाम करता हूँ।।4।।

नमस्येऽहं पितृन्मर्त्यैरर्च्यन्ते भुवि ये सदा।
श्राद्धेषु श्रद्धयाभीष्टलोकप्राप्तिप्रदायिनः॥५॥

अभीष्ट (मनावाञ्छित) लोक को देनेवाले जो पृथ्वी पर श्राद्धों में सदा श्रद्धा पूर्वक पूजे जाते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।5।।

नमस्येऽहं पितृन्विप्रैरर्च्यन्ते भुवि ये सदा।
वाञ्छिताभीष्टलाभाय प्राजापत्यप्रदायिनः॥६॥

वाञ्छित-अभीष्ट की प्राप्ति के लिए प्राजापत्य सदृश फल को देने वाले जो पृथ्वी पर सदा विप्रों से पूजे जाते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।6।।

नमस्येऽहं पितृन्ये वै तर्प्यन्तेऽरण्यवासिभिः।
वन्यैः श्राद्धैर्यताहारैस्तपोनिर्धूतकिल्बिषैः॥७॥

जंगल में रहने वाले एवं अपनी तपस्या से निश्चित रूप से पापों को दूर करने वाले वन्यों के द्वारा जो तृप्त किये जाते हैं, उन पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।7।।

नमस्येऽहं पितृन् विप्रैर्नैष्ठिकव्रतचारिभिः।
ये संयतात्मभिर्नित्यं संतर्प्यन्ते समाधिभिः॥८॥

नैष्ठिक व्रत का आचरण करनेवाले, अपने में संयत और समाधियों विप्रों के द्वारा जो तृप्त किये जाते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।8।।

नमस्येऽहं पितृञ्छ्राद्धैः राजन्यास्तर्पयन्ति यान्।
कव्यैरशेषैर्विधिवल्लोकत्रयफलप्रदान् ॥९॥

तीनों लोकों के फलों को देनेवाले जिन पितरों को क्षत्रिय लोग अशेष कव्यों से विधिवत तृप्त करते हैं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।।9।।

नमस्तेऽहं पितृन् वैश्यैरर्च्यते भुवि ये सदा।
स्वकर्माभिरतैर्नित्यं पुष्पधूपान्नवारिभिः॥१०॥

पुष्प, धूप, अन्न और जल के द्वारा पृथ्वी पर अपने कार्यों में सदा संलग्न वैश्यों के द्वारा जो सदा पूजे जाते हैं, मैं उन पितरों को प्रणाम करता हूँ।।10।।

नमस्येहं पितृञ्छ्राद्धैर्ये शूद्रैरपि भक्तितः।
सन्तर्प्यन्ते जगत्यत्र नाम्ना ख्याताः सुकालिनः॥११॥

श्राद्ध में सुकाली नाम से ख्यात जो पितर इस संसार में भक्ति-पूर्वक शूद्रों के द्वारा सदा पूजे जाते हैं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।।23।।

नमस्येऽहं पितृञ्छ्राद्धैः पाताले ये महासुरैः।
सन्तर्प्यन्ते स्वधाहारास्त्यक्तदम्भमदैः सदा।।१२।।

पाताल में रहने वाले अपने स्वधा-आहार एवं अहंकार को त्याग देनेवाले महासुरों से जो पितर श्राद्ध में तृप्त किये जाते हैं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।।12।।

नमस्येऽहं पितृञ्छ्राद्धैरर्च्यन्ते ये रसातले।
भोगैरशेषैर्विधिवन्नागैः कामानभीप्सुभिः।।१३।।

अपनी मनोभिलाषाओं को चाहनेवाले, रसातल में रहनेवाले सभी नागों से जो पितर श्राद्धों में विधिवत् पूजे जाते हैं, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।।13।।

नमस्येऽहं पितृञ्छ्राद्धैः सर्पैः सन्तर्पितान् सदा।
तत्रैव विधिवन्मन्त्रभोगसम्पत्समन्वितैः।।१४।।

विविध मंत्र, भोग, सम्पत्ति से युक्त श्राद्ध के द्वारा जो सर्पों से सदा तृप्त किये जाते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।14।।

पितृन् नमस्ये निवसन्ति साक्षाद्ये देवलोके च तथान्तरिक्षे।
महीतले ये च सुरादिपूज्यास्तेमे प्रतीच्छन्तु मयोपनीतम्।।१५।।

मैं देवादिकों से पूज्य उन पितरों को प्रणाम करता हूँ जो देवलोक, अन्तरिक्ष और पृथ्वी पर साक्षात् निवास करते हैं। वे पितर मेरे द्वारा अर्पित वस्तुओं को स्वीकार करें।।15।।

पितृन् नमस्ये परमात्मभूता ये वै विमाने निवसन्ति मूर्त्ताः।
यजन्ति यानस्तमलैर्मनोभि र्योगीश्वराः क्लेशविमुक्तिहेतून्।।१६।।

आकाश में सदा विमान पर आरूढ़ रहनेवाले परमात्माभूत मूर्त्त योगेश्वर (योगियों में श्रेष्ठ) जिनकी पूजा करते हैं, ऐसे पितरों को मैं प्रणाम करता हूँ।।16।।

पितृन् नमस्ये दिवि ये च मूर्त्ताःस्वधाभुजः काम्यफलाभिसन्धौ।
प्रदानशक्ताः सकलेप्सितानां वमुक्तिदायेऽनभिसंहितेषु।।१७।।

मैं उन पितरों को प्रणाम करता हूँ जो आकाश में मूर्त्त हैं, स्वधाभुज (स्वधा को खानेवाले) हैं, काम्य फलों को देनेवाले हैं। जो सभी इच्छित फलों को देने में समर्थ हैं एवं अनासक्त लोगों को विमुक्ति देनेवाले हैं।।17।।

तृप्यन्तु तेऽस्मिन्पितरः समस्ता इच्छावतां ये प्रदिशन्ति कामान्।
सुरत्वमिन्द्रत्वमतोऽधिकं वा सुतान् पशून् स्वानिवलंगृहाणि।।१८।।

इस श्राद्ध में इच्छावान् लोगों की सभी इच्छाओं की पूर्त्ति करनेवाले पितर तृप्त हों, जो पुत्र, पशु, धर, देवत्व एवं इन्द्रत्व से भी अधिक देनेवाले हैं।।18।।

सोमस्य ये रश्मिषु येऽर्कबिम्बे शुक्ले विमाने च सदा वसन्ति।
तृप्यन्तु तेऽस्मिन् पितरोऽन्नतोयैर्गन्धादिना पुष्टिमितो व्रजन्तु॥१९॥

जो सोम की किरणों में, सूर्य बिम्ब में, पवित्र विमानों में सदा निवास करते हैं, वे (पितर) इस अन्न, जल से तृप्त हों एवं गन्धादिकों से पुष्टि प्राप्त करें।।19।।

येषां हुतेऽग्नौ हविषा च तृप्तिर्ये भुञ्जते विप्रशरीरसंस्थाः।
ये पिण्डदानेन मुदं प्रयान्ति तृप्यन्तु तेऽस्मिन् पितरोऽन्नतोयैः॥२०॥

जो अग्नि में दिये हविष् (धृत) से तृप्म होते हैं, जो विप्र शरीर धारण कर खाते हैं, जो पिण्ड दान से प्रसन्न होते हैं, वे सभी पितर इस अन्य-जल से तृप्त हों।।20।।

ये खड्गिमांसेन सुरैरभीष्टैःकृष्णैस्तिलैर्दिव्यमनोहरैश्च ।
कालेन शाकेन महर्षिवर्यैः संप्रीणितास्ते मुदमत्र यान्तु॥२१॥

देवताओं, श्रेष्ठ महर्षियों द्वारा दत्त दिव्य, मनोहर काले तिलों से, गैंडे के मांस से, कालशाक से जो पूजे जाते हैं, वे (पितर) यहाँ (इस श्राद्ध में) प्रसन्न हों।।21।।

कव्यान्यशेषाणि च यान्यभीष्टान् यतीव तेषाममरार्चितानाम्।
तेषां तु सान्निध्यमिहास्तु पुष्पगन्धान्नभोज्येषु मया कृतेषु॥२२॥

देवताओं से अर्चित जो पितरगण हैं, उनके समीप अशेष कव्य तथा अन्य भोज्य सामग्रियाँ पुष्प, गन्ध, अन्न उपस्थित करता हूँ।।22।।

दिने दिने ये प्रतिगृह्णतेऽर्च्चां मासान्तपूज्या भुवि येऽष्टकासु।
ये वत्सरान्तेऽभ्युदये च पूज्याः प्रयान्तु ते मे पितरोऽत्र तृप्तिम्॥२३॥

जो प्रतिदिन पूजा ग्रहण करते हैं, जो मासान्त में पूजे जाते हैं, जो पृथ्वी पर अष्टकों में पूजे जाते हैं, जो वर्ष के प्रारम्भ और अन्त में पूजे जाते हैं, वे सभी पितर यहाँ (इस श्राद्ध में) तृप्त हों।।23।।

पूज्या द्विजानां कुमुदेन्दुभासो ये क्षत्रियाणां च नवार्कवर्णाः।
तथा विशां ये कनकावदाता नीलीनिभाः शूद्रजनस्य ये च॥२४॥

जो पितर कुमुद और चन्द्रमा सदृश ब्राह्मण से पूज्य हैं, जो नये उदयकालिक सूर्य के समान रक्त वर्ण क्षत्रियों से पूज्य हैं जो स्वर्ण कान्ति के समान वैश्यों से पूज्य हैं और जो नीली समान शूद्र जन से पूज्य हैं।।24।।

तेऽस्मिन् समस्ता मम पुष्पगन्धधूपान्नतोयादिनिवेदनेन।
तथाग्निहोमेन च यान्तु तृप्तिं सदा पितृभ्यः प्रणतोऽस्मि तेभ्यः॥२५॥

वे (पितर) यहाँ पुष्प, गन्ध, धूप, अन्न और जल से तृप्त हों। वे पितर मेरे द्वारा किये गये अग्निहोम से तृप्त हों, मैं उन्हें सदा प्रणाम करता हूँ।।25।।

ये देवपूर्व्वाण्यतितृप्तिहेतोरश्नन्ति कव्यानि शुभाहुतानि।
तृप्ताश्च ये भूतिसृजो भवन्ति तृप्यन्तु तेऽस्मिन् प्रणतोऽस्मि तेभ्यः।।२६।।

जो देवता अत्यन्त तृप्ति के लिए पहले दिये गये कव्यों को खाते हैं ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, मैं उन सबको प्रणाम करता हूँ।।26।।

रक्षांसि भूतान्यसुरांस्तथोग्रान् निर्नाशयन्तस्त्वशिवं प्रजानाम्।
आद्याः सुराणाममरेशपूज्या स्तृप्यन्तु तेऽस्मिन् प्रणतोऽस्मि तेभ्यः।।२७।।

राक्षस, भूत, देवता सभी के अनिष्ट को (वे पितर) नाश करें। सभी पूज्य, आद्य इन्द्रादि देवता तृप्त हों। मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ।।27।।

अग्निष्वात्ताबर्हिषद आज्यपाः सोमपास्तथा।
व्रजन्तु तृप्तिं श्राद्धेऽस्मिन् पितरस्तर्पितामया।।२८।।

अग्निष्वात्त, बर्हिषद्, आज्यप तथा सोमप नामों वाले सभी पितर इस श्राद्ध में तृप्त हों, जिनके लिए मैंने तर्पण किया है।।28।।

अग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राचीं रक्षन्तु मे दिशम्।
तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरः स्मृताः।।२९।।

पूर्व दिशा में अग्निष्वात्त (नामक) पितर गण मेरी रक्षा करें। दक्षिण दिशा में बर्हिषद् नामक पितर मेरी रक्षा करें।।29।।

प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः।
रक्षोभूतापिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः ।।३०।।

पश्चिम में आज्यप और उसी तरह उत्तर में सोमप भूत, पिशाच और असुरगणों के दोष से मेरी रक्षा करें।।30।।

सर्वतश्चाधिपस्तेषां यमो रक्षां करोतु मे।
विश्वो विश्वभुगाराध्यो धर्म्मो धन्यशुभाननः।।३१।।

भूतिदो भूतिकृद्भूतिः पितृणां ये गणा नव।
कल्याणः कल्यतां कर्त्ता कल्यः कल्यतराश्रयः।।३२।।

कल्यताहेतुरनघः षडिमेते गणाः स्मृताः।
वरोवरेण्यो वरदः पुष्टिदस्तुष्टिदस्तथा।।३३।।

विश्वपाता तथा धाता सप्तैवैते तथा गणाः।
महान् महात्मा महितो महिमावान् महाबलः॥३४॥

गणाः पञ्च तथैवैते पितृणां पापनाशनाः।
सुखदो धनदश्चान्यो धर्मदोऽन्यश्च भूतिदः॥३५॥

पितृणां कथ्यते चैतत्तथा गणचतुष्टयम्।
एकत्रिंशत्पितृगणा यैर्व्याप्तमखिलं जगत्।
तेमेऽनुतृप्तास्तुष्यन्तु यच्छन्तु च सदाहितम्॥३६॥

विश्व, विश्वमुक्, आराध्य, धर्म, शुभानन, भूतिद, भूतिकृत, भूति जो नव संख्य पितृगण हैं, इनके अधिपति यम चारों ओर से मेरी रक्षा करें। कल्याण, कल्यता कर्त्ता, कल्य, कल्यताश्रय, कल्याण हेतु और अनघ- ये छः गण कहे गये हैं। अथवा वर, वरेण्य, वरद, पुष्टिद, तुष्टिद, विश्वपा, घाता ये भी सात गण ही हैं। महान्, महात्मा, महितः, महिमावान, महाबल- ये पाँच गण पितरों के (भी) पाप नाश करनेवाले हैं। सुखद, धनद, धर्मद, भूतिद- ये भी पितरों के ही चार गण हैं। (इस तरह) एकतीस (31) पितरगणों से सारा संसार व्याप्त है, ये सभी अनुतृप्त हैं (अतः) प्रसन्न हों और सदा कल्याण करें।।31-36।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे रौच्यमन्वतरे रुच्युपाख्याने पितृस्तवनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः॥९३॥

महावीर मन्दिर प्रकाशन की पुस्तकें

मूल्य ३०.०० रु.

मूल्य ८५.०० रु.

मूल्य ६०.०० रु.

मूल्य २५.०० रु.

मूल्य १५.०० रु.

मूल्य २५.०० रु.

मूल्य ५०.०० रु., १००.०० रु.

मूल्य ५.०० रु.

मूल्य ५.०० रु.

मूल्य २०.०० रु.

मूल्य १५.०० रु.

मूल्य ६०.०० रु., १२५.०० रु.

मूल्य १०.०० रु.

मूल्य ५०.०० रु.

मूल्य १०.०० रु.

अप्राप्य

अप्राप्य

अप्राप्य

अप्राप्य

मूल्य ६०.०० रु.

सद्भावना प्रति

अप्राप्य

अप्राप्य

अप्राप्य

अप्राप्य

मुद्रण : प्रकाश ऑफसेट, नयाटोला, पटना